ॐ

परमात्मने नमः

मोक्षमार्गप्रकाशक प्रवचन

(भाग–२)

(आचार्यकल्प पण्डित टोडरमल द्वारा रचित श्री मोक्षमार्गप्रकाशक ग्रन्थ पर अध्यात्मयुगसृष्टा पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के उपलब्ध प्रवचन)

वीर सं.–२४८८, चैत्र सुद १३, मंगलवार, दि.१७–४–१९६२
अधिकार – ७, प्रवचन नं.–१९

मोक्षमार्ग प्रकाशक, सातवाँ अध्याय है। अन्य, जैन सर्वज्ञ के पंथ के सिवा दूसरे कुल में जन्मे हैं उनको तो दृष्टि में कुदेव-कुगुरु-कुशास्त्र की श्रद्धा होती है। इसलिये उनको तो यहाँ अन्य मत में गिनने में आये हैं। जैन संप्रदाय के नाम पर भी जो कोई संप्रदाय वर्तते हैं, उनको भी सनातन दिगंबर निर्ग्रंथ मार्ग के सिवा अन्य सब को अन्यमत में गिनने में आये हैं।

अब, यहाँ दिगम्बर सनातन जैन सर्वज्ञ द्वारा कहा हुआ मार्ग, उसमें जिसका जन्म हुआ है, गर्भ दिगम्बर है, गर्भ दिगम्बर कहते हैं न नवनीतभाई? जैसे गर्भ श्रीमंत। वे लोग भी निश्चय और व्यवहार कि सन्धि को समझते नहीं और मिथ्यात्वभाव रहता है, उसका कथन इसमें करने में आया है। समझे शांतिभाई! उसमें जन्म लिया इसलिये दिगम्बर हो गये ऐसा नहीं है, ऐसा कहते हैं। हम दिगम्बर है, बहुत समय से मंडली है, हम भजनमंडली करते हैं। कहाँ गये हमारे मूलचंदजी? समझे?

निश्चयनय क्या है और व्यवहार क्या है उसकी संधि समझे बिना दो नय का कथन शास्त्र में चलता है। एक निश्चय का अर्थात् सच्चा और एक व्यवहार का अर्थात् आरोपित उपचारित, साथ में निमित्त कौन है उसका ज्ञान करने को उपचार के कथन हजारों, लाखों शास्त्र में चलते हैं। लेकिन उस उपचार के कथन भी सच्चे और निश्चय के कथन भी सच्चे ऐसा मानकर भ्रम में पड़े हैं उसको मिथ्यादृष्टि कहते हैं। समझ

में आया?

निश्चय से भगवान आत्मा परद्रव्य से बिलकुल भिन्न ऐसा आत्मतत्त्व उसको पर निमित्त की अपेक्षा से समझाने में आया हो कि यह शरीर वह आत्मा, नारकी वह आत्मा, मनुष्य वह आत्मा, ऐसे सब कथन उपचार के आरोप के हैं। समझाने का हेतु यह है कि जीव वह नरदेह से जुदा है, नारकी से जुदा है ऐसा समझाने के लिये निमित्त की अपेक्षा से कथन चले हैं। उसको ऐसा मान ले कि यह भी कथन सच्चे हैं तो वह दृष्टि में बड़ी भ्रमणा सेवता है।

अब, यहाँ अपने मोक्षमार्ग का अधिकार आता है। देखो। दूसरा, बीचमें से थोड़ा चला है, देखो पृष्ठ-२५७। '**परद्रव्य का निमित्त मिटानेकी अपेक्षा से...**' शास्त्र में '**व्रत-शील-संयमादिक को मोक्षमार्ग कहा,...**' क्या कहा? शास्त्र में परद्रव्य का निमित्त मिटनेकी अपेक्षा से (अर्थात्) यह संयोग स्त्री, कुटुम्ब, परिवार उस पर जो लक्ष्य जाता है पाप का, उसमें से हटकर व्रत के परिणाम होते हैं। तो परद्रव्य के निमित्तों का आलम्बन भाव छूटने के लिये ऐसे व्रत, तप, शील के भाव को मोक्षमार्ग शास्त्र में कहा है। '**सो इन्हींको मोक्षमार्ग नहीं मान लेना;...**' लिखा है ऐसा नहीं मानना। आहाहा..! समझ में आया?

भगवान आत्मा पर निमित्त के संग में है। शरीर या स्त्री, कुटुम्ब, परिवार, राज-पाट हरित आदि खाना इत्यादि, उस ओर का--निमित्त की ओर का झुकाव मिटने के लिये और अन्दर में राग की मन्दता व्रतादि में हो उसको व्यवहार से, उपचार से कथन से उसको मोक्षमार्ग कहने में आया है।

श्रोता :- समझाने के लिये।

पूज्य गुरुदेवश्री :- समझाने के लिये। वह मोक्षमार्ग नहीं है। ऐसे तो शेठ समझते हैं थोड़ा। लेकिन अभी भी अन्दर में वहाँ दुकान का और संघ का अग्रेसरपना है वह छूटता नहीं है। कहो, समझ में आया? दशरथभाई! कहाँ गये बहन? हमने यह कहा शेठ को देखो, ठीक! कहो, इसमें क्या कहते हैं?

यह आत्मा, भगवान आत्मा को परद्रव्य का संग है न! स्त्री-कुटुम्ब-परिवार - राजपाट आदि या एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चौ इन्द्रिय, पंचेन्द्रिय की हिंसा के परिणाम के समय उसका संग है, उसके निमित्त को मिटाने के लिये, निमित्त से हटने के लिये, उस निमित्त का अवलम्बन है, उससे हटने के लिये। निमित्त से अर्थात् कोई परवस्तु को छोड़नी, रखनी वह आत्मा के अधिकार में नहीं है। परवस्तु को छोडुँ,

स्त्री को छोडुं, राज को छोडुं, राज्य को छोडुं, हरितकाय खाना छोडुं, पंचेन्द्रिय की हिंसा को मैं छोडुं, यह आत्मा का अधिकार नहीं है। वह तो उसके कारण होता है। लेकिन उस निमित्त तरफ का लक्ष्य छूटने से राग की मन्दता होती है। ऐसे व्रत, नियम और निमित्त से हटता है उस अपेक्षा से उसको मोक्षमार्ग व्यवहार से शास्त्र में वर्णन करने में आया है।

'**सो इन्हीं को मोक्षमार्ग नहीं मान लेना;...**' देखो यह बड़ी तकरार। उसको मोक्षमार्ग नहीं मानना। वह मोक्षमार्ग नहीं है। '**क्योंकि परद्रव्य का ग्रहण-त्याग...**' देखो! यह मुद्दे की बात (आयी). स्त्री, परिवार, कुटुम्ब, हरितकाय का त्याग करुं, हरितकाय का त्याग करुं, रात को आहार का त्याग करुं, चोविहार करना अर्थात् आहार छोडुँ यह सब कथन निमित्त के हैं। उपवास करुं तो आहार छोडुं, आंबेल करुं तो वह छोडुं, यह सब परद्रव्य निमित्त का अवलंबन छुड़ाने के लिये बात करते हैं। लेकिन परद्रव्य को छोड़ना और ग्रहण करना आत्मा के अधिकार में तीन काल में नहीं है। समझ में आया?

चोविहार करना अर्थात् रात को आहार नहीं करने से राग की मंदता करे तो उसने आहार छोड़ा ऐसा कहने में आता है। और आहार नहीं छोड़ा था तब राग का आहार ग्रहण करता था, खाने का राग था इसलिये आहार ग्रहण किया ऐसा निमित्त से कथन करने में आया है। लेकिन वास्तव में आहार को छोड़ सके या आहार ले सके, हरितकाय खा सके, हरितकाय छोड़ सके, उपवास में पच्चीस निवाले खाना और सात निवाले नहीं खाना ऐसा कर सके वह आत्मा का अधिकार नहीं है। समझ में आया?

परद्रव्य का त्याग... देखो महा सिद्धान्त है। '**परद्रव्यका ग्रहण-त्याग...**' एक रजकण को छोडुं और रखूँ ऐसी बात शास्त्र में राग कम होने से, मंद होने से उसके निमित्तों को इसे ग्रहण करुं, छोडुं ऐसा कथन आये, लेकिन वह ग्रहण और त्याग आत्मा नहीं कर सकता। आहाहा..! मैंने चोविहार किया, मैंने पानी का त्याग किया, मैंने लड्डु छोडे, मैंने आज उपवास किया अर्थात् पेट को खाली रखा और आहार छोड़ा- दोनों ग्रहण-त्याग आत्मा में नहीं है। समझ में आया? बहुत मुद्दे की बात आई है।

आज वीर भगवान का जन्मकल्याणक दिन है। लो यह याद आ गया इसमें। समझ में आया? वीर भगवान की जन्मजयंती नहीं लेकिन जन्मकल्याणक दिन है। जन्म जयंती तो साधारण प्राणी के लिये भी कहने में आता है। भगवान त्रिलोकनाथ परमात्मा जिस

भव में होनेवाले हैं, उस भव में वीर भगवान जब जन्मे, इन्द्रोंने आकर महोत्सव किया। ऐसे वीर उनकी वाणी में वीरता आयी है। वीरता अर्थात् वीर-विशेषरूप से, र-प्रेरती इती वीर। आत्मा के स्वभाव की ओर वीर्य को विशेषरूप से प्रेरित करे ऐसी वाणी को और ऐसे भाव को वीर कहने में आता है। ऐसी वाणी का कथन भगवान वीर परमात्माने कहा है।

हे आत्मा! '**दूरणुं चरौ मगौ वीराणां अनियत गाणीणं...**' अहो! वीरों का मार्ग सम्यग्दृष्टि और धर्मात्मा का मार्ग '**दुरणुं चरौ**'--बड़े अपूर्व पुरुषार्थ से मार्ग चलता है। महा अनन्त प्रयत्न से चलता है। '**दुरणुं चरौ मगौ वीराणं**' वीरों का मार्ग महा पुरुषार्थ से चलनेवाला है। '**अनियत गामीणं**' वीर मार्ग में चले वह अफरगामी है। अफरगामी है (अर्थात्) उस मार्ग पर चल दिये सो चल दिये, वह केवलज्ञान लेकर ही रहता हैं। समझ में आया? ऐसा जो वीर परमात्मा ने अप्रतिहत, अफर, अनियतगामी--पीछे न हटे ऐसा मार्ग जो कहा, वह वीरती इति।

भगवान चैतन्यस्वभाव पूर्णानन्द की मूर्ति प्रभु, उसको परद्रव्य का ग्रहण-त्याग तो नहीं है, लेकिन परद्रव्य को छोडुं, रखुँ ऐसा विकल्प, वह भी धर्म नहीं है, वह भी पुण्यबन्ध का कारण है, ऐसा वीर भगवान फरमाते हैं। समझ में आया? ये तो, मैंने यह छोडा, मैं पाँच (आहार) लेता नहीं, दूध-शक्कर के सिवा, यह नहीं लेता। लेकिन पर वस्तु कब लेना, नहीं लेना आत्मा में आ गयी है? समझ में आया? आज मुझे पाँच हरितकाय नहीं खानी है, मुझे आहार नहीं खाना है, मुझे उपवास करना है, मुझे इतनी चीज़ नहीं खानी है--यह सब परद्रव्य के निमित्त, यहाँ ग्रहण-त्याग के समय जो पाप का राग था, उसमें से पुण्य का राग हुआ तब मैंने यह त्याग किया है, ऐसे निमित्त के कथन को लेकर वह बात करने में आयी है। लेकिन उस निमित्त को ग्रहण करुं और त्याग करुं ऐसा जो माने, वह मिथ्यादृष्टि जीव अज्ञानी है। आहाहा..! समझ में आया?

कहते हैं कि जो '**परद्रव्य के ग्रहण-त्याग...**' यह बात है अंदर। यह मैने छोड़ा, यह मैंने ग्रहण किया, मैंने अव्रत छोड़ा अर्थात् बाह्य चीज जो उसके निमित्त की थी वह छोड़ी, मैंने शुभ व्रत ग्रहण किया है इसलिये मैं इतना ग्रहण नहीं करुँगा। यह सब परद्रव्य के ग्रहण-त्याग के कथन हैं। आत्मा परद्रव्य का ग्रहण-त्याग कर सकता नहीं। ओहोहो..! समझ में आया? यदि परद्रव्य का ग्रहण-त्याग आत्मा को हो, वह रोटी छोड़कर उपवास करे और पेट खाली रहे तो उसने पेट खाली किया ऐसा माने

तो तो आत्मा परद्रव्य का कर्ताहर्ता होता है और परद्रव्य में घूस जाये। चैतन्य स्वयं भिन्न रहता नहीं। समझ में आया?

'**आत्मा परद्रव्य का कर्ता-हर्ता हो जाय।**' लो यहाँ तो जगह-जगह शास्त्र में यह बात आये कि धर्मात्मा संत ने वस्त्र का त्याग किया। लो! नग्न होने के काल में वस्त्र उतारे, नग्नपना अंगीकार किया। कहते हैं, ऐसा होता नहीं। उस समय राग की मन्दता, पंच महाव्रत लेने के समय आयी, उस समय वस्त्र उतर गये, नग्नदशा हो गयी, विकल्प था उसमें ग्रहण-त्याग सहज उसके कारण से हो गया, उसने यह छोड़ा, नग्नपना ग्रहण किया, वस्त्र का त्याग किया ऐसा कहने में आता है। लेकिन ऐसा माने कि नग्नपना मैंने ग्रहण किया और मैंने वस्त्र का त्याग किया, (तो वह) मूढ मिथ्यादृष्टि परद्रव्य का ग्रहण-त्याग करनेवाला होता है। आहाहा..! शेठिया! समझ में आयाय़

मैंने यह छोड़ा.. मैंने यह छोड़ा.. मैंने यह छोड़ा अर्थात् मैं उतना ग्रहण कर सकता था। पहले मैं आहार ले सकता था, पानी पी सकता था, फलानी वस्तु खा सकता था, मैंने बादाम छोड़ी, मैंने रस छोड़ा, मैंने दूध छोड़ा, मैंने आम छोड़ा, तुने कब ग्रहण किया था तो छोड़ा? समझ में आया? मात्र उसके निमित्त के सम्बन्ध में तुझे पाप राग होता था, वह पाप राग छूटकर पुण्य राग हुआ उसमें वह ग्रहण-त्याग हुआ, उसको शास्त्र में ऐसा कहने में आया कि ग्रहण-त्याग करता है। उसको हम धर्म, मोक्षमार्ग कहते हैं। लेकिन यह मोक्षमार्ग नहीं है। समझ में आता है? सोभागचंदभाई! बहोत सूक्ष्म बातें हैं। ओहोहो..! दिगम्बर में जन्मे उनको भी सुनना दुर्लभ हो गया है। जन्मे हैं उसको यहाँ कहते हैं। उनके लिये तो बात है। दिगम्बर में जन्मे, सनातन जैनतत्त्व सर्वज्ञने कहा हुआ त्रिलोकनाथ परमात्मा का, सनातन दिगम्बर पंथ अनादि वीतराग मार्ग है। उसमें जन्मे और ऐसी भूल रहे उसको यहाँ मिथ्यादृष्टि कहते हैं। सोभागचंदभाई! आप सब लोग पहले से दिगम्बर में जन्मे है न? गर्भश्रीमंत थे, गर्भ श्रीमंत क्या, गर्भदिगम्बर।

कहते हैं, अहो..! मुझे मौन रहना है। उसका अर्थ कि मैं पहले बोलता था। उसको मौन रहने का अल्प शुभ भाव आया, उस वक्त वाणी सहज मौन हो गयी। और बोलने का विकल्प था तब वाणी सहज नीकली। लेकिन उसको यह कहने में आता है कि यह वाणी उसने करी, वह असत्य बोला, वह असत्य बोला वह छोड़कर सत्य बोलता है, यह सब कथन राग की मन्दता होने से सत्य बोलने में आता है और तीव्र हो तब असत्य बोलने में जाता था, उसके कथन में अब मुझे असत्य

नहीं बोलना है और मुझे सत्य बोलना है। ऐसे ग्रहण-त्याग के कथन आये लेकिन आत्मा सत्य बोल नहीं सकता और आत्मा असत्य को छोड़ सकता नहीं। वाणी को छोड़ सकता नहीं कि अब बोलना बन्द कर दुँ। कौन करे? शांतिभाई! बहुत कठिन जगत को। वाणी जड़ की अवस्था होती है। मौन रहता है तब उसको वाणी नहीं होनेवाली थी इसलिये नहीं हुई। ऐसा मान ले कि मैंने वाणी बोली और मैं मौन रहा, अब मुझे नहीं बोलना नहीं है, हम नहीं बोलेंगे। हमारे तरफ से तुमको लाभ नहीं होगा तो हम नहीं बोलेंगे। क्या है? बोलते थे तुम पहले? शेठिया! कहो, समझ में आया? ऐसा नहीं है। आत्मा बोल सकता है ऐसा भी नहीं है और आत्मा मौन रह सकता है ऐसा भी नहीं है। मैं बोलुँ और मैं मौन रहूँ, यह मान्यता परद्रव्य के ग्रहण-त्याग की है। उसको भगवान मिथ्यादृष्टि कहते हैं। कहो, समझ में आया? है ताराचंदजी? उसमें है? कहाँ है? देखो!

‘**परद्रवव्य का निमित्त मिटानेकी अपेक्षा से...**’ निमित्त मिटना। यहाँ वज़न है। ‘**निमित्त मिटानेकी अपेक्षा से...**’ अब निमित्त मिटे या नहीं मिटे वह तो उसके कारण है। ‘**व्रत-शील-संयमादिक को मोक्षमार्ग कहा,...**’ कषाय की मन्दता के परिणाम होने से उसको बाह्य निमित्त का ग्रहण कम हो गया और ज्यादा ग्रहण था लक्ष्य में वह कम हुआ, इस अपेक्षा से वहाँ उसको ही मोक्षमार्ग कहा, परन्तु ‘**इन्ही को मोक्षमार्ग नहीं मान लेना;...**’ व्रत के और त्याग के जो परिणाम और बाह्य का ग्रहण-त्याग सब परद्रव्य के आधीन है।

‘**परद्रव्य का कर्ता-हर्ता हो जाये।**’ देखो! एक रजकण भी मैं छोडुं, आज मुझे दूध नहीं पीना है। तो क्या है? दूध को तु पहले ले सकता था कि दूध को तु छोड़ सकता है? तुझे भ्रमणा हुई है, मूढ! समझ में आया? परद्रव्य को ग्रहण-त्याग करने का अधिकार आत्मा का नहीं है। लेकिन फिर भी मान ले कि मैंने इतने द्रव्य छोड़े, इतना मैंने छोड़ा, दुकान-धंधा बन्द किया, राज-पाट छोड़ा, रानियाँ छोड़ी, एक एक द्रव्य रोज कम करते जाते हैं। पच्चीस द्रव्य छूटेंगे उसमें एक-एक द्रव्य कम करते जाते हैं, मृत्यु के समय एक भी द्रव्य नहीं रहेगा। मूढ है? किस द्रव्य को कम करना है और किस द्रव्य को तुझे छोड़ना है? आहाहा..! समझ में आया? यह मिथ्यादृष्टिपना परद्रव्य को ग्रहण करुं और त्याग करुँ यह मान्यता ही मिथ्यादृष्टि की है। समझ में आया?

‘**परन्तु...**’ अब सिद्धान्त कहते हैं, ‘**कोई द्रव्य किसी द्रव्य के आधीन है**

नहीं;...' आत्मा ने राग मन्द किया इसलिये आहार चोविहार करने में आहार पेट में नहीं आया ऐसा है ही नहीं। आत्मा ने राग की मन्दता से उपवास किया इसिलये दाल-चावल थाली में थे, आजे मुझे आहार लेने का पच्चखाण है इसलिये नहीं आये और यह अटक गये, ऐसा है ही नहीं। यह रजकण वहाँ नहीं आनेवाले थे, उसके कारण वहाँ अटके थे उसको, यह राग की मन्दता का भाव देखकर, मैंने आहार छोड़ा, वह परद्रव्य का कर्ता माननेवाला मूढ मिथ्यादृष्टि है। साधु नाम धारण करता हो, श्रावक नाम धारण करता हो, फिर भी उसको जैनधर्म की कुछ खबर नहीं है।

'**कोई द्रव्य किसी द्रव्य के आधीन है नहीं;...**' राग मन्द किया इसलिये आहार अटक गया? राग मन्द किया इसलिये हरितकाय खाना अटक गया? राग तीव्र किया इसलिये हरितकाय खाने की इच्छा हुई? कहीं भी नहीं हो रहा है, मुफ्त में मान बैठता है। उसके कारण अटकता है और उसके कारण से होता है। परद्रव्य के एक भी रजकण को ग्रहण-त्याग करुं, मैंने त्याग किया और मैंने ग्रहण किया, यह मान्यता वीतराग मार्गकी आज्ञा से बिलकुल विरुद्ध है। वह जैनदर्शन को समझता नहीं है। यह बात समझने जैसी है। देखो! यह वीर (जन्मकल्याणक) के दिन यह बात आयी है। समझ में आया?

अभी तो बरतन बनाने है, उसको फोड़ने हैं, एक आदमी कहता था। देखो! भगवान ने यह कहा है शास्त्र में कि गौशाल आया और वह था न सकदाल, वह बरतन बने, वह बरतन बने वह पुरुषार्थ से बने हैं। समझे न? वह कहता है कि अपनेआप बन गये। भगवान कहते हैं कि पुरुषार्थ से बने हैं। शास्त्र के पढ़नेवाले उसमें से यह निकालते हैं। ऐसी बात कहाँ थी? बरतन तो बरतन के कारण से बने, वहाँ वीर्य का निमित्त था, उसे वह मानता नहीं था, उसको कहा कि नहीं, इस वीर्य का वहाँ निमित्त है। बरतन बरतन के कारण से बनते हैं, आत्मा उसे बना सकता नहीं। समझ में आया?

एक इच्छा हुई। जैसे यह आया न, नेमिनाथ भगवान में? ऐय..! मूलचन्दजी! क्या आया? 'तोड्या छे कांकण...' क्या आया तुम्हारे? रस्सी, ऐसा आया न कुछ? 'तोड्या छे नवसर हार'। हार ऐसे नीचे उतारा। इसने तोड़ा और छोड़ा, वह सब परद्रव्य का ग्रहण-त्याग आत्मा में तीन काल में नहीं है। सोभागचन्दभाई! यह सब आप को सीखना पड़ेगा, आप मंडली के अधिपति हो इसलिये। ऐसे सब अच्छे भजन बनाने होंगे। 'तोड्या छे कंकरा...' बोलने में ऐसा आये, बोलने में भाषा आये कि तोडे कंकण। अब मैं

आहार त्याग करता हूँ। मैं मुनिपना अंगीकार करता हूँ, भाषा ऐसी आये। लेकिन अभिप्राय में ऐसा माने कि मैंने हार पहना था उसको उतार कर यहाँ रखा, मूढ है? क्या तेरे हाथ की क्रिया से वह उतरता है? और हाथ की क्रिया तेरे से होती है और नीचे उतरा और छोड़े? आत्मा परद्रव्य का कर्ता है, इस तरह माननेवाला मूढ और मिथ्यादृष्टि है। समझ में आया? रतनलालजी! कहाँ गये? नहीं आये? वहाँ क्यों बैठे हो? रुपचन्दजी! मंडली के साथ आये हो, शाम को चले जाओगे। क्या कहा समझ में आया? आहाहा..!

'**कोई द्रव्य किसी द्रव्य के आधीन है नहीं;...**' आहा..! महासिद्धान्त, व्रत, नियम में निमित्तपने से होता है उस बात का खुलासा कर दिया है। आहाहा..! व्रत परिणाम के काल में, कोई नियम के अभिग्रह के काल में एक अभिग्रह लिया है कि मुझे ऐसा लड्डु ऐसा हो और ऐसी स्त्री तो मैं लूँगा। समझ में आया? मोतीचुर का लड्डु, मोती नाम की बाई, मोती का... क्या कहते हैं? साड़ी। ऐसा आता है न? कुछ नाम आता है। मोतीचोक की साड़ी। मोतीचोक का आता होगा, कुछ कहते हैं। और मोती का ... फूट गया हो और उस स्त्री की साडी के पल्लु से बाँधा हो, वह मोतीचुर के लड्डु दे तो मुझे लेना है, अन्यथा नहीं, ऐसा मुनि अभिग्रह रखते हैं। समझ में आया? लेकिन उस अभिग्रह में विकल्प राग की मन्दता की वहाँ बात थी और सहनशीलता ज्ञाता-दृष्टापने कितना रह सकता हूँ, उसकी एक अजमाईश थी। लेकिन परद्रव्य को ग्रहण-त्याग करता हूँ और ऐसा हो तो लूँ, ऐसा होगा तो नहीं लूँगा, यह आत्मा के अधिकार की बात नहीं है। आहाहा..!

श्रोता :- सीधी तरह नहीं लिखा है।

पूज्य गुरुदेवश्री :- यह सीधी तरह ही लिखा है। '**व्यवहारो अभूयत्थो**' ऐसा बनाया है, एक श्लोक बनाया। क्या? चार पैसे शेर तो एक मण का ढाई। एक चाबी बताई। फिर साढे सैंतीस क्यों नहीं लिखा? उसमें आ गया। चार पैसे शेर तो एक मण का ढाई। साढे सैंतीस शेर का साढे सैंतीस आना। वह नया नहीं लिखना पड़ता। समज में आया? शास्त्र में लिखा है कि कोई मनुष्य मरकर पृथ्वीकाय में जन्मता है। पृथ्वीकाय होता है न? मनुष्य मरकर पृथ्वीकाय जीव (होता है)। यह सचेत नमक, सचेत पत्थर है न? यह सब निकलते है खानमें से मकान करते हैं, वह एकेन्द्रिय जीव है। शास्त्र में एक भी दृष्टान्त नहीं है कि यह जीव मरकर पृथ्वी में गया। दृष्टान्त कितने दे? ...सब दृष्टान्त। समझ में आया? एक सिद्धान्त---

ववहारोऽभूदत्थो भूदत्थो देसिदो दु सुद्धणओ।
भूदत्थमस्सिदो खलु सम्मादिट्ठी हवदि जीवो।।११।।

'**भूदत्थमस्सिदो खलु चरित्तं भवदि जीवो**', '**भूदत्थमस्सिदो खलु शुक्लध्यान हवदि जीवो**', '**भूदत्थमस्सिदो खलु केवलज्ञान हवदि जीवो**'। एक सिद्धान्त शास्त्र ११वीं गाथा कुन्दकुन्दाचार्य महाराज की, यह सब उसके विवेचन का स्पष्टीकरण है। सब व्यवहार अभूतार्थ अर्थात् असत्य अर्थ को कहनेवाला है, ऐसा उन्होंने स्वयं पहले से कहा है। वह कहा है उसके कथन में इस तरह आप को समजना, ऐसा विचार वहाँ से उसे ले लेना चाहिये। प्रेमचन्दजी! वह तो बराबर है। क्या है सामने? आचार्य ने ऐसा क्यों लिखा? लेकिन दूसरा उपाय (नहीं है)। दूसरे को ऐसा कहे, भाई! आप आते रहो, सुनो। ऐसा कहे कि नहीं? आते रहो तो शरीर का आना-जाना वह आत्मा के अधिकार की बात है? समझ में आया? आप आओ, सुनो, बैठो, बापू! दो-पाँच दिन परिचय करो। भाषा क्या बोले? लेकिन उसका आना-जाना आत्मा के आधीन है ऐसा वह कहना चाहता है ऐसा अर्थ नहीं है। समझ में आया? ओहोहो..! और आप सुनोगे तो धीरे-धीरे समझ में आयेगा। ऐसा कहने में आये। क्या कहेंगे? आप सुनेंगे, पाँच-पन्द्रह दिन सुनोगे तो आप को समझ में आयेगा। सुनने से समझ में आयेगा? यह तो व्यवहार का कथन हुआ। समझ में आया? उसकी समजनेकी लायकात से समझेगा तब सुनने से समझ में आया ऐसा कहने में आता है। कथन ही कुछ इस प्रकार के हैं।

कहा था न, एक दिन परसों कहा था न? धर्मदास क्षुल्लक कहते हैं कि आचार्यों के कथन, हाथी के बाहर के दाँत दूसरे और चबाने के दूसरे। इस प्रकार व्यवहार के कथन का पार नहीं। हाथी के बाहर के दाँत पर सोने की ढाल चढाने बराबर। चबाने के अलग हैं अन्दर निश्चय अभिप्राय के। उसको न समझे और व्यवहार के कथन सब आये तो कहे, देखो भाई! राणी की प्रभावना नहीं हुई तब तक रथ नहीं चला था। जहाँ भाव आया और मदद की कोई राजा ने या किसी पुत्र ने, फलाना ने, रथ चला। भाव यहाँ आया और रथ उसके कारण चलता होगा? परद्रव्य इसको लेकर चलता होगा? उसको प्रभावना का भाव आया इसलिये वह रथ चलता होगा? अरे..! सुन न। रथ तो उसके कारण चलता है। सोभागचन्दजी! बड़ी बात भाई यहाँ।

उसको ऐसा मान ले कि यह प्रभावना का भाव रानी को आया इसलिये प्रभावना हुई, वरना अटक गई थी। अटक गई थी यह बात जूठी है और हुई वह बात भी जूठी है। आहाहा..! समझ में आया? पोपटलालभाई! बहुत अलग बात है यह तो।

समझ में आये ऐसी है। नहीं समझ में आये ऐसी नहीं है। समझ में आये ऐसी है तब तो बात कही जाती है न? न समझ में आये तो क्या लकड़ी को कही जाती है क्या? आत्मा को कहते हैं कि समझ! परद्रव्य के ग्रहण-त्याग के कथन शास्त्र में आता है और उस ही प्रकार ग्रहण त्याग यदि आत्मा में उस ही प्रकार से हो तो '**आत्मा परद्रव्य का कर्ता-हर्ता हो जाये।**' तो आत्मा परद्रव्य कर्ता-हर्ता तीन काल और तीन लोकमें नहीं है। समझ में आया?

'**कोई द्रव्य...**' इच्छा हुई कि धीरे बोलना, इच्छा हुई कि जोर से बोलना। कल कोई बोलता था। जोर से बोलो, धीरे बोलो ऐसा कोई बोलता था। में यहाँ सुनता था। उसका अर्थ कि ऐसी इच्छा होती है, लेकिन इच्छा हुई इसलिये जोर से बोला जाय और इच्छा हुई इसलिये धीरे-धीरे बोला जाय, ऐसे कथन शास्त्र में आये, उसको ऐसा मान ले कि मेरी इच्छा हुई इसलिये धीरे-धीरे बोलुँ, जोर से बोलुं। भाई! हमें समझ में आये ऐसे तो बोलो। तब वह जोर से बोलता है। तो इच्छा को लेकर जोर से बोला होगा? तीन काल तीन लोक में ऐसा बनता नहीं। बहुत फेर भाई इसमें।

ऐसे थप्पड मारते हैं तो कैसी मारते हैं, देखो न। शरीर पतला हो लेकिन धमाल करे। ... है कि नहींय़ ताराचन्दजी! शरीर तो पतला है लेकिन धमाल करते हैं। वह तो उसके कारण से है। इच्छा हो, वृत्ति हो लेकिन वृत्ति हुई इसलिये वहाँ ऐसे चलता है, उस परद्रव्य का ग्रहण-त्याग आत्मा में हो तो आत्मा अपना स्वरुप छोड़कर पर में प्रविष्ट हो जाये और पर का होने से वह स्वयं रहे नहीं। अतः पर का ग्रहण-त्याग आत्मा में है नहीं। ऐसे तो सुबह से लेकर रात तक कितने दृष्टान्त हैं। इतना खाया, इतना पीया, यह रखा, वह रखा, आज मेरा चोविहार सहित उपवास करना है, मुझे पानी की छूट रखकर करना है, ढीकना करना है, आज मुझे दो ही निवाला खाना है, फलाना करना है, लेकिन खाये कौन और रखे कौन? राग की मन्दता की क्रियाकाल में ऐसा बन जाता है इसलिये शास्त्र में ऐसा निमित्त का कथन आये, वह सब अभूतार्थनय के कथन हैं, वह सत्य दृष्टि के कथन नहीं है। संक्षिप्त में समझने के लिये ऐसे कथन आये बिना रहते नहीं। तो कहे क्यों? किसने कहे हैं? किसने कहे हैं? उस समय वाणी का ऐसा ही योग था उस अनुसार आ जाती है। आहाहा..! समझ में आया?

व्यवहारनय असत् अर्थ को कहता है। नय का ज्ञान उस असत्य अर्थ को कहता

होगा? भाषा करता होगा? नय का यहाँ ज्ञान हुआ वह, असत्य अर्थ--भाषा निकलती होगी? नेमिचन्दजी! वीर वीर परमात्मा त्रिलोकनाथ जिनको सर्वज्ञपद हुआ, देखा कि कोई परमाणु का किसी के हाथ का अधिकार नहीं है। अनन्त द्रव्य अपने अस्तित्व में रहकर अपना पर्यायरुपी कार्य कर रहे हैं। उस पर्याय के जाने-आने के कार्य में दूसरे कोई द्रव्य का अधिकार, स्वामीपना हो तो वह चीज जड़ की स्व हो जाये, आत्मा उसका स्वामी हो जाये। उसका स्वामी आत्मा हो तो वह जड़ हो जाये। समझ में आया?

'**आत्मा कोई द्रव्य किसी द्रव्य के आधीन है नहीं;...**' देखो! कोई में तो सब ले लिये हाँ। एक परमाणु दूसरे परमाणु के आधीन नहीं है। आहाहा..! एक विचार आया था यह नीम का पेड देखकर। नीम के टोच का एक रजकण नीचे के परमाणु के आधार से नहीं रहा है, वह रजकण अपने कारण से ऐसे-ऐसे फिरता है। हवा आयी इसलिये फिरा अथवा नीचे पत्ता है इसलिये आखरी रजकण भी उस पत्ते का उसके आधार से नहीं रहा है। निरालंबी तत्त्व कोई द्रव्य किसी के आधार से नहीं है। समझ में आया? उसमें क्षण-क्षण में धर्मी नाम धरावे और मैंने इसका त्याग किया, इसको छोड़ा (ऐसा माने)। शास्त्र में ऐसा आता है, एक कहता था कि भगवानने वस्त्र उतारे। कथानुयोग में आता है। किसने ना कहा? ग्रहण किये, छोड़े, पहने और छोड़े, दोनों आत्मा के अधिकारकी बात नहीं है। क्या आत्मा कपड़े पहन सकता है? आत्मा पहन सके तो उतार सके। तीन काल में पहन सकता नहीं, उतार सकता नहीं। समझ में आया? लेकिन जहाँ पहनने का विकल्प था और छोड़ने का विकल्प था उसमें ग्रहण-त्याग हुआ उसको छोड़ा, पहना ऐसा व्यवहार के कथन में सदुउपचार से कथन आया है। उसको ऐसा मान ले कि नक्की उसने ग्रहण-त्याग किया है, तो जैनकी आज्ञा के बाहार वीतराग का बैरी खड़ा हुआ है। आहाहा..! समझ में आया?

'**आत्मा अपने भाव रागादिक है उन्हें छोडकर वीतरागी होता है;...**' देखो! क्या कहते हैं? अव्रत का तीव्र राग हो, वह छूटे और व्रत का मन्द राग होता है। मन्द राग होने से इसमें राग की स्थिरता, शुद्धता होती है। वह रागादिभाव, द्वेषादिभाव है उसको छोड़कर। यहाँ समझाना है इसलिये। वास्तव में तो उसको छोड़कर भी नहीं है। वह तो स्वरूप में चिदानन्द प्रकाश की मूर्ति का भान हुआ कि यह आत्मा रजकण का कर्ता-हर्ता, ग्रहण-त्याग नहीं है और उसमें राग दया, दान, भक्ति का, श्रद्धा का, व्यवहार का आये वह भी उसकी चीज़ लाभदायक नहीं है और उसकी चीज़ में वह

नहीं है। ऐसा भान हुआ बाद में उसमें स्थिर होने-से राग छूट जाता है, स्थिर होने से राग छूट जाता है। उसको छोड़कर, ऐसे व्यवहार के कथन आये हैं।

लेकिन यहाँ कहना है कि उस परद्रव्य से हटाना है उस अपेक्षा से कहा। परद्रव्य का ग्रहण-त्याग नहीं है, लेकिन तीव्र राग घटाकर मंद राग हुआ, मन्द राग घटाकर वीतरागता हुई वह उसके अधिकार की बात है। लेकिन मन्द राग, तीव्र राग था इसलिये खानेकी क्रिया, हिंसा की, व्यापार की, धंधे की, हरिकाय तोड़ने की, स्त्री के भोग की थी, इसलिये वह अशुभराग कम करे तो वह क्रिया कम हो जाय, ऐसा जो कथन आये वह व्यवहार का कथन है। वह अशुभराग था इसलिये ऐसी क्रिया होती थी और अशुभराग कम हो गया इसलिये ब्रह्मचर्य की क्रिया देह में होने लगी ऐसा नहीं है। समझ में आया? ब्रह्मचर्य का शुभभाव हुआ इसलिये स्त्री का संग छूट गया, ऐसा सब कहने में आये वह सब व्यवहार के कथन हैं। ऐसा है नहीं। परद्रव्य का ग्रहण-त्याग उस तरह आत्मा के अधिकार में तीन काल में ज्ञानी और अज्ञानी को नहीं है। करे क्या?

भगवान आत्मा अपने राग, द्वेष, विषयवासना को छोडर वीतराग हो, स्वभाव की दृष्टि करके स्थिरता हो, '**इसलिये निश्चय से वीतरागभाव ही मोक्षमार्ग है।**' वास्तव में तो परवस्तु का ग्रहण-त्याग नहीं और ग्रहण-त्याग के समय वह राग तीव्र था अव्रत का छूटकर मन्द हुआ वह भी नहीं। आहाहा..! अहिंसा, सत्य, दत्त, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह का विकल्प वह मोक्षमार्ग नहीं, धर्ममार्ग नहीं, धर्म का कारण नहीं। ओहोहो..! अभी तो जगत में इतना फेरफार (हो गया है)। लेकिन अब दिशाफेर हुआ है एक पंडित कहता था। अब धीरे-धीरे लोग विचार में आते जाते हैं, झुकते जाते हैं कि बात तो सच्ची लगती है, अन्यथा तो गप चला है अभी तक।

निश्चय से '**वीतरागभाव ही...**' देखो! भाव ही। ऐसा नहीं कि वीतरागभाव वह मोक्षमार्ग और व्यवहार रागभाव भी मोक्षमार्ग (ऐसा माने) तो अनेकान्त हो ऐसा नहीं है। तकरार करते हैं न। अनेकान्त मार्ग है, अनेकान्त मार्ग है। अनेकान्त का अर्थ क्या? यह वीतरागभाव सो मोक्षमार्ग है और वह व्रत का रागभाव आया, अशुभराग छूटा और रागभाव आया, वह भी मोक्षमार्ग है नहीं। उसको अनेकान्त कहने में आता है। व्यवहार का.. कहाँ गये बाबुभाई? गये? गये, ठीक। बाबुभाई, फत्तेहपुरवाले गये होंगे। कहो, समझ में आया कुछ? वह तो गुजरात में उसका प्रचार ज्यादा है न। शांत व्यक्ति है। उसको व्यवहार-निश्चय की शैली में यह क्या था उसको (समझना

था)। एक ओर व्रतादि के परिणामकी बात करते हैं और एक ओर परद्रव्य के ग्रहण-त्याग की बात करते हैं। लेकिन परद्रव्य के ग्रहण-त्याग के समय जो शुभ-अशुभ के परिणाम वर्तते थे वह भी बन्धमार्ग है और पर का ग्रहण-त्याग तो आत्मा में है नहीं।

बाद में लेंगे कि व्रतादि परिणति वह कोई मोक्षमार्ग नहीं है। आगे लेंगे। बात के पन्ने में लेंगे। समझ में आये कुछ? व्रतादि परिणति मति केवल वीतराग हो तब होती है। वह आगे लेंगे। बाद के पन्ने पर है भाई! २५८ देखो। ५८ में है। वह कहता है कि हम व्रतादि छोड देंगे। तब कहते हैं कि '**व्रतादिकरूप परिणति को मिटाकर केवल वीतराग उदासीनभावरूप होना बने तो अच्छा ही है,...**' तीसरा पैराग्राफ अथवा ऊपर से दूसरे पैरेग्राफ की तीसरी पंक्ति नीचे। देखो! '**व्रतादिकरूप परिणति को मिटाकर...**' नीचे के पेरेग्राफकी चौथी पंक्ति। '**व्रतादिकरूप परिणति को मिटाकर केवल वीतराग उदासीनभावरुप होना बने तो अच्छी ही है; वह नीचली दशा में हो नहीं सकता;...**' समझ में आया?

व्रत, अव्रत के परिणाम के काल में, परपदार्थ के संयोग-वियोग का काल बना, उसको लेकर उसका मालिक बन जाय कि मैने इतने संयोग का सेवन किया और इतने संयोग का वियोग किया। उस बात में कुछ माल नहीं है। मिथ्यात्व की बड़ी भ्रमणा है। दिगम्बर में जन्मा हो फिर भी ऐसी श्रद्धा रखे तो वह मिथ्यादृष्टि और मूढ है। उसके व्रत, तप, त्याग सब बिना एक अंक के शून्य हैं, गोल, गोल है। समझ में आया?

'**निश्चय से वीतरागभाव ही मोक्षमार्ग है।**' अब थोड़ी बात करते हैं। '**वीतरागभावोंके...**' वीतरागभाव अर्थात्? आत्मा अखण्ड शुद्ध चैतन्य पुण्य-पाप के रागरहित, व्रत और अव्रत के रागरहित। व्रत का भाव शुभ है और अव्रत का भाव अशुभ है। दोनों समय के संयोग-वियोग का लक्ष्य छोड़कर जो व्रत-अव्रत के परिणाम हुए वह भी मोक्षमार्ग नहीं है। व्रत के परिणाम भी। ओहोहो..! यहाँ तो साधारण व्रत अभी बिना मतलब के ले, वहाँ तो हज़ारों रूपये खर्च किये, पाँच-पचास हज़ार खर्च क्ये। धूल है, सब पाप है। समझ में आया? दुर्गादासजी! ऐसी बात है। एकदम साधु हो जाना है। लो, साधु हो जाओ। वस्त्र बदले। वस्त्र तो चारण भी बदलकर आता है।

श्रोता :- वस्त्र बदलने का भगवान ने कहा है।

पूज्य गुरुदेवश्री :- वस्त्र बदलने को भगवान ने कहा ही नहीं है। वह बात तो

चली। वस्त्र बदलने की बात वीतराग ने कही नहीं है। मात्र अशुभराग फिरने से शुभराग आये तब वस्त्र बदल जाते हैं, उसको बदलता है ऐसा कहने में आता है। आहाहा..! क्या करे? समझ में आया?

ऐसा कहने में आये कि भगवान की भक्ति करते समय अशातना नहीं करना। कोई नाकमें से मैल नहीं निकालना, यह नहीं करना, ऐसा ही आये न व्यवहार के कथन में? अशातना नहीं करना, ऐसा नहीं करना। तो कौन मैल निकाल सकता है? कौन मैल छोड़ सकता है? अरे..! आहाहा..! लेकिन जब भगवान का बहुमान वर्तता है उस भाव के समय ऐसी क्रिया नहीं होती तो इसने नहीं की ऐसा कहने में आता है। लेकिन उसने नहीं की ऐसा मान ले कि मैं मैल साफ करके गया, मैंने मैल साफ किया, तो मूढ है। गज़ब बातें हैं यह तो। समझ में आया?

चप्पल निकालकर अन्दर जाना। पैर धोकर जाना। ऐसा कथन आये, लो। चप्पल आत्मा निकाल सकता होगा? और आत्मा पग धो सकता होगा पानी डालकर? वह तो जड़ की पर की क्रिया है, होनेवाली होती है वह होती है। लेकिन भगवान के बहुमान के कथन में जब ऐसा आये कि भगवान के पास जाने में धर्मी को ऐसा हो सकता नहीं। चप्पल नहीं, अधिकरण नहीं, शस्त्र हाथ में तलवार आदि लेकर भगवान के पास दर्शन करने को नहीं जा सकते। तब तलवार लेकर नहीं जा सकते तो तलवार छोड़कर जाने का अधिकार होगा? समझ में आया? उसका अर्थ यह है कि भगवान की भक्ति के काल में उसके शुभभाव ऐसे होते हैं कि ऐसी चीज पर लक्ष्य नहीं होता। ऐसे जुता, चमड़ा आदि का लक्ष्य छुड़ाने के लिये ऐसे कथन किये। लेकिन उसने--आत्माने ग्रहण-त्याग किया है, हथियार पकड़ा और हथियार को छोड़ा, वह आत्मा में मिथ्यादृष्टिपना माने वह माने। समझ में आया? बात में बहुत फ़र्क़ हो गया।

ये लिखा शास्त्र में। भाई! लिखा है लेकिन किस नय का कथन है? शास्त्र में एक-एक गाथा के पाँच अर्थ होते हैं, ऐसा कहते हैं। कोई भी वाक्य हो उसका शब्दार्थ होता है, उसका नयार्थ होता है, किस नय का वाक्य है ऐसा आचार्य ने कहा है, वह देखना चाहिये। और वह आगमार्थ में क्या लागू होता है यह देखना चाहिये, अन्य मतार्थ में क्या लागू होता है यह देखना चाहिये और तात्पर्य उसका क्या है यह (देखना) चाहिये। एक-एक श्लोक के पाँच प्रकार से अर्थ होना चाहिये। ऐसे ही पढते जाये और यह लिखा है, वह लिखा है। सब लिखा है, सुन न। समझ में आया?

एक दृष्टान्त देते हैं न? शंकर का एक मन्दिर था, शंकर का मन्दिर था। शंकर के मन्दिर में बड़ा अण्डा था। उसके साथ उसके पिता और पुत्र वहाँ रहते थे। पच्चीस लाख, पचास लाख के मालिक। पुत्र बहुत साधारण था। पचास लाख बरामदे में गाड दये। लिखा कि, शंकर के मन्दिर के अण्डे के नीचे मैंने पचास लाख गाड़े हैं, लड़का बडा हो जाये तब यहाँ से निकालना। समझ में आया कि नहीं? और चैत्र सुद ८ को सूर्य जहाँ आये वहाँ मैंने गाड़े हैं। पिता मर गया, पैसे न मिले। उसका बरामदा खोदने लगे।

श्रोता :- ...

पूज्य गुरुदेवश्री :- लेकिन वह अण्डा-अण्डा। शंकर का मन्दिर ले लिया, शंकर का पूरा मन्दिर ले लिया। चलो न, लाख में मिलता है, पचास लाख निकलेंगे। नीचे पुरा खोद डाला, कुछ नहीं मिला। अण्डा के नीचे खोदा, कुछ नहीं मिला। यह क्या? उसके मित्र के पास गया कि बापू! आप मेरे पिता के मित्र हो। उसने ऐसा लिखा है। भाई! तु समझा नहीं। उस अण्डे की छाया चैत्र शुक्ल अष्टमी को तेरे बरामदे में जहाँ गिरे वहाँ नीचे गाड़े हैं ऐसा लिखा है। नरभेरामभाई! तुम्हारे पिता इतने पागल नहीं थे कि किसी और के घर में गाड़ने जाये। शंकर के मन्दिर में गाड़ने जाये वहाँ उसके अण्डे के नीचे। लेकिन इसमें लिखा है न? लिखने का यह आशय है कि यह शंकर का मन्दिर है उस ओर, तेरा घर यह है। आठ बजे सूर्य आये, बरमादे में जितने में धूप पड़े उसके नीचे गाड़े हैं। खोदा तो पचास लाख निकले। लिखने का आशय समझे बिना अपनी रीति से अर्थ करे। सोभागचन्दभाई! उसको ऐसा होता है। पचास हजार और लाख का वह लिया, सब गया। किसी का शंकर का मन्दिर को खोदने लगा।

यहाँ कहते हैं कि वास्तव में वीतराग के चारों अनुयोग--शास्त्र में, पुण्य और पाप, शुभ और अशुभ भाव रहित आत्मा के स्वभाव की श्रद्धा, ज्ञान और रमणता ऐसा वीतरागभाव वह एक ही धर्म का मार्ग, मोक्ष का मार्ग, एक ही संसार को तोड़ने का उपाय है। लेकिन '**वीतरागभावोंके और व्रतादिकके कदाचित् कार्य-कारणपना है,...**' क्या कहते हैं यह? आत्मा में रागरहित श्रद्धा, ज्ञान और रमणता होती है तब तो अभी अधूरा वीतराग भाव होता है, तब उसको व्रतादि का परिणाम निमित्तरूप, कारणरूप होते हैं। और पूर्ण वीतराग हो जाये तब होते नहीं। इसलिये कहा कि '**वीतरागभावों के और व्रतादिकके कदाचित्...**' कदाचित् अर्थात्? जब तक आत्मा की वीतरागी श्रद्धा,

ज्ञान, रमणता कम हो, तब व्रतादि के निमित्त के परिणाम हो उसको व्यवहार से कारण कहकर कथन करने में आता है। लेकिन जब वीतरागता पूर्ण हुई तब तो राग की मन्दता हो सकती नहीं। इसलिये वीतरागभाव की पर्याय को आत्मा के स्वभाव की शुद्धता की श्रद्धा, ज्ञान और रमणता को और नीचे की दशा में कदाचित् व्रतादिक के परिणाम, रागकी मन्दता के परिणाम को, वीतराग कार्य है और व्रतादि के परिणाम कारण निमित्तरूप है। व्यवहार कारणरूप है ऐसा कहने में आया है।

कदाचित् समझते हो? वीतराग पूर्ण। वीतरागभाव को और उसको निमित्त हो तो केवली को भी व्रत के परिणाम होने चाहिये। लेकिन नीचे की दशा में जहाँ अभी वीतरागभाव पूर्ण नहीं हुआ है उस वक्त, श्रद्धा, ज्ञान और रमणता भी शुद्ध है और व्रत के, दया के, दान के थोड़े शुभभाव हैं। उसको निमित्त देखकर कारण और कार्य गिनकर कथन किया है। निश्चय से वह कारण नहीं है। वह तो पहले आ गया है। अन्य कारण से दूसरे का कार्य हो वह व्यवहारनय का कथन है, ऐसा ही मान ले तो मिथ्यात्व लगता है। कहो, समझ में आया इसमें?

इसलिये व्रतादिक को मोक्षमार्ग कहा। वह निमित्त देखकर वीतराग श्रद्धा, ज्ञान, रमणता.. वीतराग नाम अकषाय, आत्मा का अकषाय स्वभाव, उसकी श्रद्धा, ज्ञान और एकता हुई, पूर्ण एक्ता नहीं है वहाँ व्रतादिक के परिणाम पंच महाव्रत के मुनि को, संत आदि को होते हैं अथवा बारह व्रतादि के परिणाम श्रावक को होते हैं, इसलिये उसको निमित्त से, व्यवहार से व्रतादिक को मोक्ष का मार्ग कहा। लेकिन वह कहनेमात्र ही है, लेकिन वह कथनमात्र है। वह मोक्षमार्ग है नहीं। भाई! कह दिया कि वह कारण-कार्य गिनकर कहा, लेकिन वह कहनेमात्र है, कारण भी कहनेमात्र है। गंभीर संधि करी है। कहनेमात्र है, वस्तु की अपेक्षा नहीं। आहाहा..!

परद्रव्य का ग्रहण-त्याग तो नहीं है, लेकिन व्रत के परिणाम जो सम्यग्दृष्टि को वीतरागी श्रद्धा, ज्ञान, चारित्र में साथ में हो, उसको व्यवहार से कारण कहा वह भी कहने मात्र है। निश्चय से तो वह कारण है नहीं। वीतरागी श्रद्धा, ज्ञान, चारित्र का कारण कारणपरमात्मा स्वयं है। सूक्ष्म बात। श्रद्धाकी खबर नहीं, सत्य परमेश्वर कहाँ पड़ा है किस प्रकार, पता नहीं, और यूँ ही चलते जाये, जैनधर्म है, जैनधर्म है ऐसा माने। समझ में आया?

'व्रतादिकको मोक्षमार्ग कहा सो कथनमात्र ही है;...' निश्चय से व्रतादि कारण नहीं है। उसको कारण कहना वह अभूतार्थ व्यवहारनय के कथन हैं। आहा..! कितना

स्पष्ट है नवनीतभाई! आहाहा..! बहुत स्पष्ट। अधिकार भी बराबर आज जयंति का- भगवान के जन्म कल्याणक का दिन है। देखो आया है, लो। '**परमार्थसे बाह्य क्रिया मोक्षमार्ग नहीं है...**' बाह्य क्रिया वह राग व्रत के परिणाम भी मोक्षमार्ग नहीं है। वह तो राग है, विकल्प है। अहिंसा, सत्य, दत्त, ब्रह्मचर्य को पालना ऐसी शुभ वृत्ति उठती है, वह तो राग उठता है। समझ में आया? कठिन लगे, नये लोगों को तो सुनना भी कठिन पड़ जाये। सत्य वीतराग मार्ग चलता नहीं और यह बात आये तो उसको ऐसा लगे कि अरर..! यह तो सब... क्यों मालचन्दजी! वह भी उसमें ही थे न पहले तो?

'**बाह्यक्रिया मोक्षमार्ग नहीं है...**' दो बात कही। एक तो अशुभभाव के काल में हिंसादि की क्रिया जड़ में होती है वह भी आत्मा की नहीं है, आत्मा करता नहीं और दया के परिणाम के समय सामने जीव बच गया और नहीं मरा, वह आत्मा ने किया नहीं, और दया का जो भाव आया वह भी धर्म का कारण नहीं है। आहाहा..! वह तो आस्रवतत्त्व है। दयाभाव सो आस्रवतत्त्व है। वह यदि धर्म तत्त्व हो तो सिद्ध में भी होना चाहिये। सिद्ध में है नहीं। वह तो परमात्मा हो गये। वह तो राग था। राग का अभाव करके स्वरूप में वीतराग विज्ञानघन होकर सिद्ध हुए।

'**व्रतादिक को मोक्षमार्ग कहा सो कथनमात्र ही है; परमार्थ से...**' देखो! वह व्यवहार कथनमात्र हुआ। '**परमार्थ से बाह्यक्रिया मोक्षमार्ग नहीं है-ऐसा ही श्रद्धान करना।**' ऐसी श्रद्धा उसको पक्की करनी। इससे विरुद्ध कोई कहता हो, कहलवाता हो, मानता हो, सब की श्रद्धा छोड़ देनी। ओहोहो..! समझ में आया? वीर का मार्ग विरल प्राप्त कर सके। वीर का मार्ग तो कायरों को कंपित कर दे ऐसा है। कलेजा काँप उठे। आहाहा..?

हीजड़ा लड़ाई में नहीं जा सकते। हीजड़ा समझते हो? नपुंसक, नपुंसक। हीजड़ा कहते हैं? नपुंसक--पावैया। शरीर बहुत कम होता है। एक युवान लड़का यदि मिले और चिल्लाये तो भागने लगे। हीजड़े वहाँ लड़ाई में खड़े रह सकते हैं, हीजड़ा? ऐसे जिसका वीर्य उल्टा है, बाह्य पर पदार्थ को ग्रहण-त्याग कर सकता हूँ और राग की क्रिया कुछ मन्द हो तो धर्म हो, ऐसा माननेवाले को हीजड़ा--नपुंसक शास्त्रकार ने कहा है। समझ में आया? समयसार में आया है, समयसार में आया है। क्लीब-क्लीब पाठ है संस्कृत में। क्लीब है। शास्त्र में यह एक-एक बोल है। कोई घर की बात नहीं है। शास्त्र में कहा है कि क्लीब, वीर्य तेरा नपुंसक है। तु पुण्य, दया, दान

के परिणाम को धर्म मानता है, तो हीजड़ा है, नपुंसक है धर्म के लिये। तुझे पुत्र प्रसवने का तुझे भान नहीं है। चैतन्य की प्रजा, ज्ञाता-दृष्टा स्वभाव उसकी पर्याय कैसे प्रगट हो उसका तेरे पास वीर्य नहीं है। तेरा वीर्य उल्टा है। समझ में आया?

कहते हैं कि परमार्थ से व्रत और अव्रत दोनों परिणाम बन्ध का कारण हैं। अव्रत के परिणाम पाप है और व्रत के परिणाम पुण्य है। दोनों धर्म नहीं है। और उसको धर्म कहते हैं, कहलाते हैं, कहनेवाले को मदद करे वह सब, डाकु को रोटी खिलाने जैसा है। बहावटिया समझते है? डाकु। बहारवटिया नही कहते तुम्हारे में? डाकु का आप के वहाँ बहुत जोर है न। हम देवगढ़ गये थे तब ३३ पुलीस साथ में आयी थी। देवगढ़ गये थे न? देवगढ में? यह थे न हमारे सेठ। नेमिचन्दभाई। ३३ पुलीस। क्योंकि संघ बड़ा था। और बड़े डाकु, बहोत डाकु थे। समझे न? लेकिन यहाँ तो कोई नहीं, कोई नहीं।

श्रोता :- ... लूटते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री :- हाँ, वह तो ऐसा ही होता है, वह तो लूट ले डाकु। यहाँ तो कोई नहीं है। एक डाकु की बात करते थे कोई। कहाँ? द्रोणगीरी। यहाँ का एक डाकु निकला है। महाराज आप का नाम सुनकर वेश पलटकर दर्शन करने आयेगा। आप के संघ का नाम नहीं लेगा। आप का नाम इतना प्रसिद्ध हो गया है कि वेश पलटकर दर्शन कर लेगा। लेकिन किसी को लूटेगा नहीं। द्रोणगीरी था न? द्रोणगीरी गये थे। समझ में आया? कहते हैं कि जैनशासन के डाकु राग की क्रिया और बाह्य क्रिया में धर्म मनानेवाले जैनशासन के लूटेरे हैं। समझ में आया? यह ऐसा कहा देखो न। '**ऐसा ही श्रद्धान करना।**' देखो! लिखा है? टोडरमल तो पुकार करके डंके की चोट पर लिखकर गये हैं जगत समक्ष।

'**इसीप्रकार अन्यत्र भी...**' देखो, अब आया। '**इसीप्रकार अन्यत्र भी व्यवहारनयका अंगीकार नहीं करना...**' अन्यत्र जहाँ-जहाँ व्यवहार के कथन आये हो वहाँ भी व्यवहारनय का अंगीकार नहीं करना। ऐसा स्थापित किया है न भाई? करना समझ लेना। आ गया। व्यवहारननय को अंगीकार करना अर्थात् व्यवहारनय का कथन किया हो वहाँ उसको जानना कि यह कथन इस तरह चलते हैं, लेकिन उसका आदर करना नहीं। कहो, समझ में आया? वह तो उसमें आ गया। '**अन्यत्र भी व्यवहारनयका अंगीकार नहीं करना ऐसा जान लेना।**' उसका अर्थ हो गया न? समझ लेना कि व्यवहारनय अंगीकार करनेलायक नहीं है। समझ में आया?

यह तो जिसको... बापू! आत्मा का खेल खेलना हो और संसार के जन्म-मरण की जाल टालनी हो, उसके लिये यह बात है। बाकी सब मौज करे, सब एक-दूसरे को मख्खन लगाये कि, ओहोहो..! आपने बहुत धर्म किया, वह कहे, आपने बहुत अच्छा धर्म बताया। परस्पर एक-दूसरे को मख्खन लगाये। माखण समझते हो न? मख्खन माने क्या? मसका-मसका। यहाँ तो कहते हैं कि नहीं। भगवान के पास इन्द्र आकर भक्ति करे तो इन्द्र आकर करते हैं ऐसा जो कहा है, वह असत्य बात है। शरीर की क्रिया आत्मा कर सकता ही नहीं। उस वक्त भक्ति का राग था न? राग था। लेकिन राग था इसलिये क्रिया हुई है ऐसा कहा हो तो वह बात सत्य नहीं है। और राग था तो हमारे जन्म-मरण का अन्त होगा। हे नाथ! आप की भक्ति से मुक्ति होगी, ऐसा लिखा हो तो समझना कि ऐसा है नहीं। वह राग तो पुण्यबन्ध का कारण है। जैसे व्रत का परिणाम पुण्यबन्ध का कारण है, ऐसे भक्ति के परिणाम भी पुण्यबन्ध का ही कारण है। इसीप्रकार अन्यत्र भी व्यवहारनय को समझना। लो!

अब दूसरा प्रश्न उठेगा कि यह बात तो ठीक, लेकिन अपने को क्या? पर को उपदेश करने में अपना कोई प्रयोजन है व्यवहार में? उपदेश के लिये आप की व्याख्या हुई। अब अपने लिये व्यवहारनय अंगीकार करना कुछ लाभदायक है कि नहीं? उसका स्पष्टीकरण करेंगे। (श्रोता :- प्रमाण वचन गुरुदेव!)

वीर सं.-२४८८, चैत्र सुद १४, बुधवार, दि.१८-४-१९६२
अधिकार - ७, प्रवचन नं.-२०

यह सातवाँ अधिकार है। जैन में जन्म होने के बावजूद, निश्चय अर्थात् सत्य का क्या स्वरूप और व्यवहार अर्थात् आरोपित कथन और आरोपित भाव क्या है, इसकी जानकारी बिना, एकान्त से अपने मत को मानता है, वह जैन में रहनेवाला साधु हो, गृहस्थ हो फिर भी वह सब मिथ्यादृष्टि है। मिथ्या अर्थात् पापदृष्टि है। उसको धर्मदृष्टि की खबर नहीं है। वह बात चलती है। तीन बात आ गयी।

निश्चय है वह आत्मा के मूल स्वरूप को बताता है अथवा निश्चय है वह वीतरागभाव को मोक्षमार्ग का स्वरूप कहकर बताता है। व्यवहार है वह जीव को नारकी जीव, मनुष्य जीव आदि से, निमित्त से उसकी पहचान कराता है। और व्यवहार, निश्चय मोक्षमार्ग जो आत्मा का वीतरागी अंतर ज्ञाता-दृष्टा की दृष्टि, उसका ज्ञान और रमणता,